1 वैश्विक परिदृश्य में स्वामी विवेकानन्दः राष्ट्रवादी चिन्तन एवं दर्शन

डा0 (श्रीमति) विनोद कालरा*

25 दिसम्बर 1892, भारत भूमि के ठीक नीचे दक्षिण में कन्याकुमारी के मंदिर के सामने 29 वर्षीय युवा संयासी खड़ा था। चिंता, थकान और परेशानी से भरा वह युवक सहसा मंदिर में प्रतिष्ठित भव्य मूर्ति को देखकर दिव्यानंद से भर गया। मूर्ति के समक्ष नतमस्तक, कुछ देर समाधि में लीन वह युवक उठा, उस किनारे से उत्तर की ओर देखा। हिंद महासागर की उठती, नृत्य करती, गर्जन करती लहरों को निहारा। युवा संयासी की आँखें भर उठी।

चार वर्षों से भारत का भ्रमण करता वह युवा अपने गुरू के स्वर्गवास के उपरांत भारत और भारतवासियों को देखने की अभिलाषा लिए बंगाल से निकल पड़ा और अनेक कठिनाइयों को पार करता हुआ, ऊंचाइयों को लाघंता, भारत माता के चरणों–कन्याकुमारी पहुंच गया। चार वर्षों की लंबी कठिन यात्रा में उसने परतंत्र भारत का निराश रूप देखा। गहन गंभीर समुद्र के किनारे टहलते इस संयासी का दिल पुकार उठा।

ओह, क्या यही है मेरी मातृभूमि। मेरा भारत वर्ष ???? उसके दिल की वेदना आंसू बनकर झलक पड़ी।

समुद्र से कुछ दूरी पर स्थित चटट्ान को देख, इस युवा का मन वहां बैठकर विचार करने को हुआ। धनाभाव के कारण कश्ती में न जाकर इस व्यक्ति ने तैर कर समुद्र पार करने का संकल्प लिया। चटट्ान पर बैठकर तीन दिन तीन रात निराहार इस युवा ने विचार मग्न होकर राष्ट्र के रोग का निदान पा लिया। आशा उत्साह और विश्वास से कह उठा– मैंने मातृभूमि के उद्धार का उपाय खोज निकाला है। अब उसी में जीवन लगाऊंगा ..... नहीं.... नहीं..... मुझे मोक्ष चाहिए। मैं बार बार जन्म लूं और इन करोड़ों भारतवासियों की सेवा करूं। यही मोक्ष है।

'विवेकानंद शिला' के नाम से विख्यात उस चट्टान पर इस महान और दिव्य अनुभूति ने उस साधक को देशभक्त संयासी बना दिया। उनके जीवनी लेखक ने लिखा है, वह साधारण संयासी एक महान सुधारक, कुशल संगठक और एक महान राष्ट्र निर्माता बन गया। उसने एक ऋषि की दृष्टि से यह समझ लिया कि भारत अपने महान गौरव से पतन की गर्त में क्यों आ पड़ा है।

वही युवा संयासी–स्वामी विवेकानंद आज इस राष्ट्र के नायक बन चुके

*अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, कन्या महाविद्यालय, जालन्धर

हैं। स्वामी विवेकानंद सामयिक भारत के उन कुशल शिल्पियों में से हैं जिन्होंने आधारभूत भारतीय जीवन मूल्यों की आधुनिक अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में विवेक संगत व्याख्या की तथा विगत और वर्तमान, परम्परा और आधुनिकता, पूर्व और पश्चिम, आध्यात्मिकता और भौतिकता, विज्ञान और विश्वास, विचार और व्यवहार, साधना और स्वास्थ्य जैसे एक दूसरे से दूर दिखाई देने वाली नदी के तट को समन्वय और सामंजस्य के सेतु से जोड़ने का भगीरथ प्रयत्न किया। उनके चिन्तन कोश में भारतीय नव निर्माण के उर्वर बीज तो यत्नपूर्वक संकलित हैं ही, उसमें पीड़ित और जर्जरित मानवता के पुनः सृजन की कार्यसाधक योजना भी सन्निहित है।

स्वामी विवेकानंद ने अपने चिन्तन में अनेक पूर्वकालीन अवधारणाओं को समकालीन संदर्भ में परिभाषित किया और एक नयी सामाजिक व राजनीतिक समझ को जन्म दिया। मूलतः आध्यात्मिक विचारक होने के कारण उनके राजनीतिक चिंतन का आधार धर्म रहा। इसी आधार पर स्वामी विवेकानंद ने एक आदर्शवादी राष्ट्रवाद की धारणा दी जो विश्व के किसी अन्य राष्ट्रवादी चिंतन की तुलना में कहीं अधिक सक्षम है। विभिन्न कालों में धर्म के स्वरूप की व्याख्या में रूढ़िया आती चली गई और राष्ट्र में सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक स्थिति इतनी श्रृंखलाबद्ध हो गई कि व्यक्ति तो व्यक्ति, समाज और राष्ट्र भी दीर्घ काल के लिए अज्ञान रूपी अंधकार में विलीन हो गए। ऐसे में स्वामी विवेकानंद ने धर्म को कर्मकाण्ड और रूढ़िवादी व्याख्याओं से अलग नैतिक मानवतावादी आधार देने का प्रयास किया। उन्होंने धर्म के व्यावहारिक रूप को पहचानने की आवश्यकता को महत्वूपर्ण माना और व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों पहलुओं पर बल देते हुए उसे धार्मिक कर्मकाण्ड से अलग राजनीतिक एवं सामाजिक चिंतन में उसकी विशेष भूमिका पर बल दिया। वेदांत के आधार पर उन्होंने समानत, कर्तव्य, अधिकार एवं न्याय आदि राजनीतिक अवधारणाओं की व्याख्या दी। सभी धर्मों के प्रति समान भाव रखते हुए प्रत्येक व्यक्ति में स्थित आत्मा और दैवीय तत्व को उभारने पर बल दिया।

वास्तव में स्वामी विवेकानंद राजनीतिक अर्थों में एक महान राष्ट्रवादी थे, जिन्होंने धर्म के माध्यम से राष्ट्र को पुनः जागृत किया। उन्होंने परम्परागत अर्थ में दार्शनिक या समाज सुधारक होने का दावा नहीं किया। वे धार्मिक व्यक्ति थे और उनका मानना था कि धर्म की सही व्याख्या सही समझ ही संघर्ष, दुख और सामाजिक बुराईयों को दुर कर एक सशक्त राष्ट्र का निर्माण करती है। उन्होंने राष्ट्रवाद के निर्भीक, संगठित और स्वावलंबी मूल्यों को स्थापित किया और राष्ट्र की स्वत्रंतता एवं आत्मसम्मान को महत्व देते हुये राष्ट्र के आध्यात्मिक पहलू को स्थापित किया जो उन्हें पश्चिमी राष्ट्रवादी चिंतन से अलग कर देता है क्योंकि पश्चिम में

राष्ट्रवाद का विकास, महत्वपूर्ण सांस्कृतिक तत्व 'धर्म' से अलग होकर हुआ। स्वामी विवेकानंद ने प्रत्येक व्यक्ति में आत्मविश्वास जगाना, आत्मसम्मान जागृत करना ही राष्ट्रीय जागरण का महत्वूपर्ण कारक माना। वे सामाजिक न्याय और दरिद्रों के उत्थान के लिए महात्मा गांधी और अम्बेडकर के अग्रज थे जिन्होंने व्यक्ति को ईश्वर मानकर उसके उत्थान की कल्पना की।

स्वामी विवेकानंद के संदर्भ में कुछ लोग यह मानते हैं कि वे मात्र वेदान्ती, संयासी और धर्म उपदेशक थे। वे केवल अध्यात्म और हिन्दु धर्म को पश्चिम में पहुचांने वाले थे। राजनीतिक चिंतन और राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन से उनका कोई संबंध नहीं था इसलिये उनके चिंतन की राष्ट्रवादी अथवा राजनीतिक व्याख्या नहीं हो सकती। पाश्चात्य चिंतन में धर्मोपदेशक ईश्वर की व्याख्या तक ही स्वयं को सीमित रखते थे और इसलिए इस प्रकार की भ्रान्त धारणा बना ली गई। लेकिन भारतीय धर्मोपदेशकों की यही विशेषता रही है कि वे धर्म के माध्यम से समाज सुधार और राष्ट्र की जागृति को महत्व देते थे। उन्होंने धार्मिक चोला पहन कर कार्य नहीं किया अपितु देश में राजनीतिक चेतना लाने का प्रयास भी किया। भारत का प्राण धर्म है, भाषा हैं, भाव धर्म है और राष्ट्रीय जागृति में भी धर्म का योगदान उल्लेखनीय है। स्वामी विवेकानंद मानते हैं कि धर्म ही व्यक्ति और राष्ट्र को शक्ति प्रदान करता है। राजनीतिक दासता से मुक्ति के लिए उन्होंने आहवान किया– इसका सामना हम तभी कर सकते हैं और तभी शक्तिशाली बन सकते हैं, जबकि हम अद्वैत के आदर्श का साक्षात्कार कर लें, सबकी एकता के आदर्श की अनुभूति कर लें और अपने में जागृत कर लें विश्वास, विश्वास और विश्वास।

भारत के गौरव को स्वामी दयानंद सरस्वती ने भी प्रस्तुत किया था, लेकिन स्वामी विवेकानंद ने अमेरिका और यूरोप में भारत को, भारतीय धर्म वेदांत को मान्यता दिलाई। हीगल की तरह विवेकानंद जी को भी राष्ट्र के ध्येय में विश्वास था। उनका विचार था कि भारतीय संस्कृति की नींव आध्यात्मिक है इसलिए पश्चिम के लिए उसका यही विशेष संदेश है। पश्चिम के लोग भौतिक, दैहिक तथा व्यापारिक संतोष और सफलताओं में आवश्कताओं से अधिक व्यस्त हैं इसलिए पश्चिमी संस्कृति में उन गंभीर धार्मिक मूल्यों को समाविष्ट करना आवश्यक है जिसका पोषण और समर्थन पूर्व के ऋषियों–मुनियों ने किया है। बंकिम चंद्र जी की भांति विवेकानंद भी भारतीय विचारधारा की विजय में विश्वास करते थे और भारत को आराध्यादेवी मानते थे और उसकी देदीप्ययान प्रतिमा की कल्पना और स्मरण से उनकी आत्मा जगमगा उठती थी। इसी प्रतिमा ने राष्ट्रवासियों को प्रभावित किया और भारत माता की स्वतंत्रता के लिए भारत में राष्ट्रवाद का विकास हुआ।

जब कुछ समय के लिए भारत की उन्नति और विकास की गति मंद हो गई तो स्वामी विवेकानंद ने आत्मबल के आधार पर निर्भय होकर खड़ा होना ही अत्याचार और उत्पीड़न का सर्वोत्तम प्रतिकार बताया। क्योंकि संकल्प प्रत्येक वस्तु से शक्तिशाली होता है। उन्होंने उस समय भारत में प्रचलित अत्याचारपूर्ण राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था की आलोचना करने की नाकरात्मक नीति नहीं अपनायी, अपितु शक्ति के संग्रह पर भावनात्मक बल दिया। अगस्त 1898 में प्रबुद्ध भारत के प्रति अपनी कविता में लिखा–

जागो फिर से एक बार/यह तो केवल निद्रा थी, मृत्यु नहीं थी/ नवजीवन पाने के लिए, कमल नयनों के विराम के लिए/उन्मुक्त साक्षात्कार के लिए/एक बार फिर जागो/आकुल विश्व तुम्हें निहार रहा है/हे सत्य/तुम अमर हो।

विवेकानंद मानते थे कि राष्ट्र व्यक्तियों से निर्मित होता है इसलिए उनका अनुरोध था कि सभी व्यक्तियों को अपने भीतर मानवता, मानव गरिमा, पुरूषत्व और सम्मान की भावना की विकास करना चाहिए। परन्तु इन व्यक्तिगत गुणों की पूर्ति अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम की भावनात्मक भावना से होनी चाहिए। व्यक्ति को अपने अहम और राष्ट्र की आतमा के साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहिए। यह भारतीय दर्शन का आधार स्तम्भ था और इन आदर्शों को पुनः प्रतिष्ठित करने और सेवा तथा त्याग को राष्ट्र के पुनरउद्धार का तात्विक आधार बनाना आवश्यक था। उन्होंने भारतीयों का आह्वान करते हुए कहा– 'हे वीर, निर्भीक बनों। साहस धारण करो, इस बात पर गर्व करों कि तुम भारतीय हो और गर्व के साथ घोषणा करों, मैं भारतीय हूँ और प्रत्येक भारतीय मेंरा भारई है। ज्ञानहीन भारतीय, दरिद्र और अकिंचन भारतीय, ब्राहमण भारतीय, अछूत भारतीय मेरा भाई है। भारतीय मेरा जीवन है। भारत के देवी देवता मेरे ईश्वर हैं। भारतीय समाज मेरे बाल्यकाल का पालना है, मेरे यौवन आ आनंद उद्यान है, पवित्र स्वर्ग और मेरी वृद्धावस्था की वाराणसी है, भारत की भूमि मेरा परम स्वर्ग है, भारत का कल्याण मेरा कल्याण है।' यहां व्यक्ति को समूह, समाज और राष्ट्र से अलग करके वैराग्य लेकर कल्याण की कामना नहीं की गई है। उनके चिंतन में कल्याण मानव मात्र की सेवा हें। राष्ट्र का उत्थान व्यक्ति की उत्थान और व्यक्ति का उत्थान राष्ट्र का उत्थान है।

विवेकानंद का मानना था के राख से ढकी हुई अग्नि के समान इस आधुनिक भारतवासियों में छिपी हुई पैतृक शक्ति अभी भी विद्यमान है औश्र यथा समय उसका स्फुरण होगा।

विवेकानंद के विचारानुसार भारत में जनजागृति, आत्मनिर्भरता, आत्मविश्वास

और विदेशी राज से मुक्ति सार्वभौम प्रेम और बंधुत्व से ही संभव है। निःसंदेह उनके राष्ट्रवादी चिंतन का बालगंगाधर तिलक, अरविंद, महात्मा गांधी जैसे राष्ट्रवादी विचारकों पर प्रभाव पड़ा। वास्तव में आधुनिक परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुरूप धर्म की पुर्नव्याख्या और उसे पुनः स्थापित कर राष्ट्रवाद से जोड़ना विवेकानंद की साधना थी। उनका चिंतन किसी राजनीतिक दल से संबंधित नहीं था। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सही अर्थों में जनसाधारण के मानस को स्पर्श करने का प्रयास किया। अपने देशवासियों को अपनी संस्कृति की गरिमा और वरिष्ठता की प्रबल अनुभूति कराई। द रीनकोर्ट ने विवेकानंद के प्रभाव के विषय में संक्षिप्त उल्लेख किया है कवि सम्राट रवीन्द्र नाथ ठाकुर, सर्वश्रेष्ठ रहस्यवादी एवं दार्शनिक अरविन्द घोष और विदेशी साम्राज्य को हिलाकर अंत में चकनाचूर करने वाले महात्मा गांधी जैसे बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों के सभी क्षेत्रों के अग्रनायकों ने भारत के मानस को स्पन्दित करने वाले रामाकृष्ण और उनकी आत्मा प्रबुद्ध करने वाले विवेकानंद के प्रति अपना आभार माना है। विवेकानंद ने भारतवासियों में गौरवपूर्ण अतीत के आधार पर आतमविश्वास एवं आत्मभिमान एकता, अटल धैर्य, कार्यदक्षता के भाव को जगाया और भारत के इतिहास, संस्कृति व सभ्यता में निहित राष्ट्र निर्माण के आश्चर्यजनक सिद्धांतों की ओर ध्यानाकृष्ट करते हुए उन सिद्धों को राष्ट्र के मानस को मथने वाली समस्याओं के संदर्भ में व्यावहारिक उपयोग का दिग्दर्शन कराते हुये एक दुर्लभ अंतःदृष्टि दी और विलक्षणता से उसकी व्याख्या की।

समग्रतः स्वामी विवेकानंद आधुनिक भारत के मंत्रद्रष्टा और पुरोधा थ। उन्होंने प्राचीन काल की युग–युग व्यापी परंपरा और चेतना को तो आतमसात किया ही था। वे मातृभूति की दुरावस्था से भी पूरी तरह परिचित थे। भाग्य ने नरेन को अपने युग के महत्तम योगी स्वामी रामकृष्ण परमहंस के चरणों में जा पहुंचाया और उसी का परिणाम था स्वामी विवेकानंद का आविर्भाव।

आज से प्रायः एक शताब्दी पहले पराधीन भारत के जिस एकाकी और अकिंचन योद्धा ने हजारों मील दूर विदेश में नितांत अपरीचितों के बीच अपनी ओजमयी वाणी में भारतीय धर्म साधना संदेश के चिरन्तन सत्यों का जयघोष किया, उसके समर्थ व्यक्तित्व और कृतित्व का स्मरण, अध्ययन, चिंतन और मनन हर पीढ़ी के लिए आवश्यक है क्योंकि उनका संदेश देशकाल की सीमाओं को लांघता हुआ प्रेरणास्त्रोत बन गया है। यह संदेश बहुआयामी है। उसमें आत्मा की भूख मिटाने के लिए धर्मों और संस्कृतियों से अतीत सनातन सिद्धांतों का संगीत है। उसमें व्यक्ति जीवन के आमूल रूपान्तरण के लिए साधना की एक पद्धति है। समाज और समूची मानव जाति को नए सिरे से गठित करने की अपूर्व क्षमता है। उन्होंने अपने जीवन

का प्रधान लक्ष्य मानव निर्माण माना है। राष्ट्र निर्माण और विश्वनिर्माण की दिशा में यह पहला कदम है। वास्तव में विवेकानंद के राष्ट्रवादी चिंतन व दर्शन में भारत के ही नहीं, विश्व के नवनिर्माण के बीत छिपे हैं। उनका चिंन, उनका संदेश न कभी पुराना पड़ सकता है, न कभी मर सकता है। वह पुनर्नवा है। वह आज के लिए भी सार्थक है और कल के लिए भी सार्थक सिद्ध होगा।

संदर्भ ग्रंथ

1. डा0 कर्ण सिंह, भारतीय राष्ट्रीयता का अग्रदूत, ग्रंथ विकास, जयपुर, 1999

2. रोम्यांरोला, द लाइफ ऑफ स्वामी विंकानंद, अद्धैत आश्रम, अल्मोड़ा, खंण्ड–2।

3. स्वामी विवेकानंद, व्यावहारिक जीवन में वेदांत, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 1994।

4. स्वामी विवेकानंद, हे भारत, उठो जागो। रामकृष्ण मठ, नागपुर, 1997।

5. राजेन्द्र प्रसाद गुप्त, स्वामी विवेकानंदः व्यक्ति और विचार, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।

6. डा0 शिखा अग्रवाल, स्वामी विवेकानंद और सांस्कृति राष्ट्रवाद, आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2003।